International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-5, Issue-6 Nov-Dec- 2018
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

भक्तिकालीन हिंदी निर्गुण काव्य का संस्कृतिक अनुशीलन

डॉक्टर सारिका धोंडिराम शेप

सार

यह अध्ययन भक्तिकालीन हिंदी निर्गुण काव्य का संस्कृतिक अनुशीलन को ध्यान में रखकर किया गया है इसमें भक्तिकालीन समय का अध्ययन कर निर्गुण भक्ति काव्य और कवियों का अध्ययन किया गया है उनकी प्रवृति और विशेषताओं का उल्लेख किया है

मुख्य शब्द : भक्ति, निर्गुण काव्य.

प्रस्तावना

भक्ति काल का उद्‌भव विशेष परिस्थितियों में हुआ है। भारत मुस्लिम शासन में अनेक विषमताओं से जूझ रहा था। ऐसे में जनमानस को आस्था विश्वास और भक्ति से ही जीने का मार्ग मिलता है। इस काल की प्रमुख प्रवत्तियों रेखाकंन योग्य है हिंदी साहित्य का पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) राजनीतिक दृष्टि से देखा जाए तो मुसलमानों के आक्रमण और अपने उत्थान–पतन का काल कहा जा सकता है। देश में मुसलमानों का राज्य, उनकी भारतीय संस्कृति के प्रति उपेक्षा भाव देखकर हिंदु जनता निराश हो गयी । मुस्लिम साम्राज्य स्थापित हो जाने से मंदिरों, मूर्तियों को हिंदुओं के सामने ही छिन्न–विछिन्न किया जाता रहा। जिसे देखकर हिंदु जन समुदाय निराश हो गया। इसी निराशा से उबरने के लिए वह ईश्वर को याद कर उसकी शक्ति, दया, करूणा को पाने के लिए भक्तिमार्ग पर चल पडा। यही से भक्तिकाल का उदय हुआ।

मुसलमानों का भारत पर आक्रमण करना एक असाधारण घटना मानी जाती है। मुसलमानोंने अपने राज्य का आदर्श इस्लाम धर्म के सिद्धांतोंके अनुसार गढ़ा था । मुसलमानों ने भारत पर आक्रमण कर अनेक मंदिर मस्जिदों में तबदील किये, गैर मुस्लिम को उनके राज्य में जीवनयापन करना कठीन था। उन्हें या तो मुस्लिम बनने पर मजबूर किया जाता था या मौत के घाट उतार दिया जाता। हिंदुओं को उनकी पूजा–अर्चा से दूर करने के लिए उनपर श्जजियाश नामक कर लाद दिया गया था। का चुकाने में असमर्थ जनता धर्मपरिवर्तन करने के लिए मजबूर हो जाती। फलस्वरूप अनेक देशों की सभ्यता, संस्कृ ति, धर्म तथा जीवन प्रणाली नष्ट होती चली गई। फिर भी इस भीषण संक्रांतिकाल में भारत की वीरता अटल रही, धर्म अखंडित रहा। वैसे देखा जाए तो हिंदुओं के धर्म और संस्कृति को नष्ट–भ्रष्ट करने के अनेक प्रयास किये गये, मंदिरों–मूर्तियों को खंडित किया जाता रहा। लेकिन पुनःश्च मंदिर का निर्माण किया जाता रहा। मुसलमानों की इसी धार्मिक नीति के फलस्वरूप साहित्य के क्षेत्र में भक्ति आंदोलन का सूत्रपात हुआ।

भक्तिकाल का समय संवत 1375 से 1700 तक माना जाता है। भक्तिकाल के आरंभ में यहाँ मुहम्मद बिन तुगलक का साम्राज्य था। तुगलक से लेकर शाहजहाँ तक का समय भक्तिकाल के अंतर्गत आता है।

तुगलकवंश के बाद सैयद वंश और सैयद वंश के बाद लोदी वंश ने शासन किया। लोदी वंश के अंतिम शासक इब्राहिम लोदी बाबर के हाथों 1526 इ. में पराजित हुआ और इसके साथ ही मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। मुगल काल के आरंभ में देश में राजनैतिक स्थिरता आरंभ हुई थी। केंद्रीय शासन शिथिल होने के कारण लोदी वंश काल में मालवा, गुजरात, जौनपुर, बंगाल, बहमनी राज्य स्वतंत्र हुए थे। शेरशाह ने हुमायूँ को पराजित किया लेकिन शेरशाह की मृत्यू की पश्चात हुमायूँ को पराजित किया लेकिन शेरशाह की मृत्यु की पश्चात् हुमायूँ ने पुनः भारत पर अपना कब्जा कर लिया। हुमायूँ के बाद अकबर ने अपनी उदार धार्मिक और सामाजिक नीतियों के बलबूते पर हिंदूओं का दिल जीता। अकबर के पश्चात जहाँगीर अकबर की नीतियों को अपना नहीं सका। जहाँगीर के बाद शाहजहाँ ने मुघल साम्राज्य की बागडोर संभाली। औरंगजेबने शाहजहाँ को बंदी बनाया वह स्वयं राजगद्दी पर बैठा। इस प्रकार हम देखते हैं कि भक्तिकाल में तुगलक, सैय्यद, और मुगलवंश के सम्राटों ने भारत पर राज किया। इस दृष्टि से देखा जाए तो भक्तिकाल का पूर्वार्ध राजनीतिक दृष्टि से अपेक्षाकृत अस्थिर ही रहा। मुसलमान शासकों ने तलवार के बल पर अपने धर्म एवं नीतियों का प्रचार–प्रसार करने का प्रयास किया। अकबर जैसे उदार मनोवृत्ति के मुगल शासकों के कारण हिंदू–मुसलमानों में अपनी मेलजोल बढा। कबीर और जायसी जैसे कवियों ने हिंदु–मुस्लिम समन्वय का मार्ग दिखलाया। हिंदूओंपर किये गये अत्याचार दमन और इस्लामिक नीति के फलस्वरूप भक्ति आंदोलन को अप्रत्यक्ष रूपसे गति मिली। उत्तरी भारत में मुसलमानों क्रूर दमन चक्र के कारण भक्ति के योग्य भूमि मिली जिस पर दक्षिण से वैष्णव आचार्यो ट्वारा लाया हुआ भक्ति का पौधा पनप का बटवृक्ष बना। इस प्रकार तत्कालीन विषम राजनैतिक परिवेश का भक्ति आंदोलन के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है।

सांस्कृतिक परिवेश

तत्कालीन समय में हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियाँ एक–दूसरे के निकट आई। संगीत, चित्र तथा भवन–निर्माण कलाओं में दोनों संस्कृतियों के उपकरणों में समन्वय स्थापित हुआ। समन्वयात्मकता भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषता है। पुराणों में समन्वयात्मकता को जागत करने व उसे बढ़ावा देने का यथा–सम्भव प्रयास किया गया है। मूर्ति–पूजा, तीर्थ यात्रा, धर्म–शास्त्रों का सम्मान, कर्म फल में विश्वास, अवतारवाद अथवा सगुण भक्ति का ही सर्वत्र आधिपत्य दिखाई देता है। भारतीय समाज में समय–समय पर विदेशी और विजातीय तत्त्वों के आते रहने के कारण परस्पर संघात होते रहे हैं। परन्तु इन्हीं में से होकर एक जीवनी शक्ति का संचार भी होता रहा है कि भारतीय साहित्य डूबते–डूबते उभरकर इस युग की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषताओं में गिना जा सकता है, जिनकी धुरी पर हिन्दू जीवन चक्र चलता रहा और इस्लाम के भारत–प्रवेश के पूर्व तक अविकृत रूप में प्रचलित रहा । मध्यकालीन हिन्दू समाज के दो पक्ष उभरकर हमारे सामने आते हैं। एक वह जो शास्त्रों का समर्थक है और दूसरा वह जो परम्परागत विश्वासों तथा मान्यताओं अथवा स्वानुभूति का पक्षधर है। यह दूसरा पक्ष ही पौराणिक पक्ष है। परवर्ती आचार्यों ने इन्हीं मतों की व्याख्या प्रतिव्याख्या के रूप में विशिष्यद्वैत, केवलाद्वैत, द्वैताद्वैत, शद्धाद्वैत आदि मतों की स्थापना की। इन सभी में ईश्वर को निरपेक्ष मानकर उसकी भक्ति का प्रतिपादन किया गया है, परन्तु आत्मा, परमात्मा, मोक्ष, पुनर्जन्म आदि के सिद्धान्त प्रायः ज्यों के त्यों रह गये हैं। ईश्वर और मनुष्य के बीच संबंध स्थापित करने का एक माध्यम धर्म है। जाति, कुल, देश–काल और परिस्थितियों से निरपेक्ष होकर नैतिक दायित्व का निर्वाह करना धर्म है। धर्माचार अथवा

नैतिकता समाज परक है और धर्म साधनाव्यक्तिनिष्ठ । साध्य और साध का एकीकरण साधना के माध्यम से होता है। परन्तु इस काल में धर्म–साधनों की बाढ़ सी आ गई और गुप्त साधनाओं के अन्तर्गत तुच्छ साधनाएँ भी इसमें प्रवेश कर गई। धर्माचार के नाम पर अनाचार, मिथ्याचार और व्याभिचार तक पलने लग गया। फलस्वरूप ज्ञान–चर्चा की आड़ में पाखण्ड को प्रश्रय मिलने लगा और समाज में एक प्रकार की अराजकता फैल गई। मध्यकाल में अरूचि और संस्कार का प्राधान्य था। इस कारण बहुधा सांमजस्य बिगड़ जाता था। और सन्तुलन बनाये रखने के लिए बार–बार समन्वय की ओर उन्मुख होना पड़ता था। इस प्रकार मध्यकाल में भारत की सामाजिक संस्कृति का रूप और अधिक निखरने लगा। ताजमहल और लाल किला भारतीय तथा ईरानी वास्तुकलाओं के सम्मिश्रण के उत्तम निदर्शन है। नायक–नायिकाओं के नयनाभिराम चित्रों तथा विविध कलाओं के रूप में दोनों जातियों की चित्र कलाओं का समागम दर्शनीय है। एलोरा के समीप कैलास मन्दिर में शिव की मूर्ति के सिर के ऊपर बोधियक्ष स्थित है। खजुराहो से उपलक । कोक्कल के वैधनाथ मन्दिर वाले शिलालेख में ब्रह्म, जिन, बुद्ध तथा वामन को शिव का स्वरूप कहा गया है।

निर्गुण भक्ति काव्यधारा

निर्गुण भक्ति काव्यधाराओं (ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी) का सैद्धांतिक अध्ययन रूमध्यकालीन भक्ति के दो पक्ष है। – 'सगुण' और 'निर्गुण' इन्ही दो रूपों के आधार पर हिंदी में भक्ति की दो धाराएँ प्रवाहित हुई। संतकाव्य परंपरा को विभिन्न नामों से जाना जाता है।

आ. रामचंद्र शुक्ल ने 'निर्गुणधारा' को 'ज्ञानाश्रयी' और श्प्रेमाश्रयीश दो शाखाओं में विभाजित करके उसे निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा नाम दिया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि इस शाखा के कवि श्ज्ञानश को सर्वाधिक महत्त्व देते हैं। निर्गुण उपासक साधकों को श्संतश और सगुणोपासकों को प्रायः श्भक्तश कहा जाता है।

निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्यधारा :

निर्गुण पंच की ज्ञानाश्रयी शाखा के अंतर्गत हिंदुओं द्वारा हिंदु–मुस्लिम एकता स्थापित करने का प्रयास किया गया। संत कवियों ने निर्गुणवाद में हिंदु–मुसलमान एकेश्वरवादी थे, बहु देवतावाद के विरुद्ध थे। अतः संत कवियों ने निर्गुणवाद के आधारपर राम–रहीम की एकता एवं हिंदु मुसलमानों की कोशिश की। कबीर इस धारा के प्रमुख प्रवर्तक माने जाते हैं। इस काव्यधारा में केवल हिंदू–मुसलमानों के धर्म का ही समन्वय न होकर गोरखपंथियों के हठयोग, वेदान्तियों के ज्ञानवाद, सूफियों के प्रेमवाद तथा वैष्णवों के अहिंसावाद और प्रपत्तिवाद का भी सुंदर और सफल समन्वय हुआ है। उसमें सामाजिक समन्वय को विशेष महत्व है। इस प्रकार के समन्वय द्वारा निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के संतो ने हिंदी साहित्य और हिंदी भाषी प्रदेश दोनों को गौरान्वित किया है। इसी कारण निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्यधारा के सिद्धांतों का अध्ययन हिंदी साहित्य के विद्यार्थी के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

नाम की उपासना :

संत लोग निर्गुणवादी होने के कारण प्रायः नाम की उपासना करते थे। ये लोग सतिवाद और मिथ्या आंडवर का भी विरोध करते थे। गुरु को ईश्वर के समान महत्ता देते थे। जाती–पाती इनके लिए कोई महत्व नहीं रखती थी। ये लोग साधारण धर्म को मानते हुए वर्णाश्रम संवधी विशेष धर्म के विरोध में थे। वैयक्तिक साधना पर इन्होंने विशेष बल दिया है।

निर्गुण ज्ञानाची काव्यधारा के सिद्धांत निम्नलिखित हैं। –

- **ईश्वर :** निर्गुण ज्ञानाश्रयी संत एकेश्वरवादी हैं। ये निर्गुण निराधार ब्रह्म की उपासना करते हैं। मुसलमान और हिंदु धर्म में समान रूप से ग्राह्य होनेवाले उनका ईश्वर हैं। जो संसार के प्रत्येक कण–कण में व्याप्त है। जिसमें ज्ञान का प्राधान्य है ऐसे योग और निर्गुणभक्ति से उसकी प्राप्ति संभव है। ऐसे ईश्वर की प्राप्ति में गुरु को अनन्य साधारण महत्त्व है। जिसे संतोने ईश्वर समान ही माना है।
- **माया :** सत्पुरुष से उत्पन्न माया ही सृष्टि की सृजय शक्ति है। जो सत्य और मिथ्या भी है। कबीर ने संसार को भ्रम में डालनेवाली महाठगिनी माया का खंडन किया है।
- **हठयोग :** बलपूर्वक ब्रह्म से मिलन हठयोग कहलाता है। यह मिलन मन को एकाग्र का परमात्मा के दिव्यता स्वरूप से परिचित करवाता है। शारीरिक और मानसिक परिश्रम के द्वारा ही ब्रह्म की अनुभूति को जाती है। जो हठयोग का आदर्श है। गोरखनाथ द्वारा चलाए हुए इस हट्योग का कबीर तथा अन्य निर्गुण संतोपर इसका प्रभाव पड़ा इसी हठयोग कबीर ने ईश्वर प्राप्ति का एक महत्त्वपूर्ण साधन माना है।
- **सूफी मत :** सूफी मत का भी संत–मत पर पर्याप्त प्रभाव दिखायी देता है। आत्मा–परमात्मा का संबंध जो सूफी मतवाले मानते हैं तथा प्रेम की पीर को महत्त्व देते हैं। यही बात संत लोग भी स्वीकार कहते हैं। सूफीमत के अनुसार आत्मा–परमात्मा के ऐक्य में शैतान बाधा उत्पन्न करता है तो निर्गणमत के अनुसार माया आत्मा–परमात्मा के मिलन में बाधा बनती हैं। –––
- **रहस्यवाद :** कबीर का रहस्यवाद अद्वैतवाद और सूफी मत से संयोग से बना है। इसमें आत्मा को खी और परमात्मा को पुरुष रूप में मानकर दोनों का मिलन कराया है। जबतक ईश्वर प्राप्ति नहीं होती तब तक आत्मा विरहिणी की भाँति तडपती रहती है।, परमात्मा से मिलन के बाद ही रहस्यवाद के आदर्श की पूर्ति हो जाती है। संत मत के अन्य कवियों ने भी रहस्यवाद पर लिखा है। लेकिन कबीर जैसी अनुभूति की तीव्रता उनमें दिखाई नहीं देती
- **रुपक :** संतो ने अपने गूढ तथा गंभीर भावों को रूपक द्वारा प्रस्तुत किया है। कहीं–कहीं ये रुपक बहुत ही अस्पष्ट हो गये हैं। कबीर ने रूपकों का प्रयोग उलटबांसी के रुप में तथा आश्चर्यजनक घटनाओं की सृष्टि के लिए किया है।

उपर्युक्त सिद्धांतो के अलावा निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्यधारा के संत आत्मशुद्धि को बडा महत्त्व देते है।साथ ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, मान और अहंकार, सांसारिक पदार्थों के संग्रह, स्वादिष्ट आहार, मांसाहार, मादक वातु, मन की चंचलता, दुर्जन–संग अन्य देवता की पूजा, वेशभूषा संबंधी आंडयर आदि का त्याग करने की सलाह देते हैं। संतो की साधना वैयक्तिक न होकर समष्टिमूलक थी। वे जाति–पाति का भेदभाव मिटाकर एकता का प्रचार तथा प्रसार करना चाहते थे। संतों के लिए सभी समान थे। मगलों के आक्रमण से हिंदस्थान चित्रभिन्न हो चुका था। वर्णभेद के कारण असंतोष फैला था। जिसका संतो ने

समूल नाश करना चाहा। तत्कालीन परिवेश के कारण संतोने निम्न वर्ग को अपना लिया परंतु जहाँ पूरी जाति का प्रश्न आ जाता है, वहां उनका उदार मतवादी दृष्टिकोण दिखायी नहीं देता।

प्रेमाश्रयी काव्यधारा :

निर्गुण धारा की वह दूसरी शाखा है। ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवि निराकार परमात्मा की अनुभूति श्ज्ञानश बताते थे। अतः वे ज्ञानाश्रयी कहलाये और प्रेमात्रेयी शाखा के प्रवर्तक एवं अनुयायियों विश्वास था कि भगवान की अनुभूति प्रेम के माध्यम से हो सकती है। और इस प्रेमसाधना के लिए गुरु का सहयोग अनिवार्य है। यह काव्यधारा सूफी काव्य या सूफी प्रेमाख्यानक काव्य के नाम से भी जानी जाती है।

इस परंपरा के कवियों ने प्रेम रस की ऐसी धारा प्रवाहित की जिसमें सभी सराबोर हो उठे। श्सूफीश शब्द श्सूफश से बना है जिसका अर्थ है श्सफेद ऊन काश। सूफी लोग वैभव शून्य, सरल जीवन बिताते थे। वे मोटे ऊन के वस्त्र पहनते थे, इसलिए उन्हें सूफीश कहा जाता था। सूफी लोग पीर (गुरु) को अधिक महत्त्व देते थे। वे ईश्वर और जीव का संबंध प्रेम का मानते हए सर्वेश्वरवाद के ओर अधिक पके हुए दिखायी देते थे। यह काव्यधारा मुसलमान संतो और सूफियों की सद्भावना का फल था। सूफी लोग ईश्वर को अपने प्रेमपात्र के रूप में देखना चाहते हैं। इन संतो ने हिंदु प्रेम–गाथाओं को लेकर काव्य रचना की और उसके द्वारा अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। जायसी इस शाखा के प्रधान कवि थे।

• प्रेमाश्रयी काव्यधारा के सिद्धांत निम्नलिखित हैं –

1) ईश्वर : सूफी मत के अनुसार ईश्वर एक है जिसका नाम हक है। आत्मा और ईश्वर में कोई अंतर नहीं है। आत्मा स्वयं को बंदे के रूप में प्रस्तुत कर ईश्वर तक पहुँचने का प्रयत्न करती है। खुदा तक पहुँचने के लिए बंदे को शरीयत, तरीकत, हकीकत, और मारिफत ये चार दशाएं पार करनी पडती है। प्रेम में चूर होकर आत्मा–परमात्मा में मिल जाती है। सूफी संत ईश्वर को अपना प्रियतम मानते हैं। उनके लिए ईश्वर प्राप्ति का एकमात्र आधार श्प्रेमश है।

2) प्रेम : सूफी मत के फकीर श्प्रेमश को ईश्वर प्राप्ति का साधन मानते हैं। इनका प्रेम निस्वार्थ होता है सूफी लोग ईश्वर को प्रियतम मानते हुए उससे प्रेम की भीख मांगते है।

3) **शैतान और पीर :** सूफी मत वाले बदे और ईश्वर के संमिलन में शैतान को बाधक मानते हैं। यह शैतान साधक को पथ से विचलित कर देता है। इसलिए शैतान से बचने के लिए सूफियों ने पीर अर्थात गुरु की आवश्यकता बतायी है। फलस्वरूप सूफी मत में श्पीरश (गुरु) का बड़ा सम्मान है। वह पीर ही शक्तिशाली साधन है जो साधक को शैतान से रक्षा करता है।

4) जीव : कुरान में ब्रह्म–जीव का संबंध स्वामी और सेवक जैसा है। उसमें अल्लाह और मुहम्मद का संबंध स्पष्ट है। अल्लाह सर्वोपरि है तथा मुहम्मद उनका रसूला है। सूफियों ने वेदान्तियों की तरह जीव के ब्रह्म स्वरूप माना है। आदमी अल्लाह का प्रतिरूप है। मूलतः अल्लाह और बदे में कोई अतर नहीं है। सूफियोपर अदेतवादियों का काफी प्रभाव पड़ा है।

5) सृष्टि : सूफियों की दृष्टि में सृष्टि का उपादान कारक श्सहश है। 'सह' का अर्थ अलौकिक शक्ति है जो इन्सान में अंशरूप में स्थित है। इन्सान की रुह का शरीर से जो संबंध है वही 'मह' का सृष्टि से है। ईश्वरने अपनी सत्ता को सर्वप्रथम कह का रूप दिया। जिससे सृष्टि की उत्पत्ति हुई। सूफियों के अनुसार सृष्टि के सारे उपकरण अल्लाह के प्रतिबिंब है। इस प्रतिबिंबित अल्लाह के सौंदर्य पर मुग्ध होकर सूफी संत उसमें तन्मय हो जाते हैं, और हक्क तक पहुँच जाते हैं। सूफियों के मतानुसार सृष्टि वह दर्पण है जिसमें अल्लाह का आत्मदर्शन हो जाता है। इस दर्पण अल्लाह का प्रतिबिंब ही इन्सान है।

6) **अन–अल–हक :** सूफियों के अनुसार अल्लाह और इन्सान एक ही तत्व के बने है। उनकी साधना यही है कि साधक श्अन्–अल–हकश (मैं ब्रह्म हूँ) का स्वयं अनुभव करता है। उसे विरह की साधना की आवश्यकता पड़ती है। सूफी दिन–रात उसे अल्लाह से श्महामिलनश की आकुलता का अनुभव करना चाहते हैं और अंततः जीव–ब्राह्म एक हो और अनुभव करना चाहते है कि (अहं ब्रह्मास्मि) मैं ब्रहम् हूँ।

सूफी संतो का संप्रदाय हिंदु धर्म से बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। सूफी लोग हिंदुओं के सर्वेश्वरवाद के निकट पहुँच जाते है। जिस प्रकार निर्गुण संतोंने हिंदु–मुस्लिम एकता का प्रयत्न किया उसी प्रकार सूफी संतों ने सांस्कृतिक एकता का प्रयत्न किया। सूफी ईश्वर को अपने प्रेमपात्र के रूप में देखते हैं और आत्मापरमात्मा के मिलन में शैतान को बाधक मानते हैं। सूफी संतों ने हिंदुओं की प्रेमगाथाओं को लेकर अपने अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति की है।

ज्ञानाश्रयी शाखा या संत काव्यधारा में हम निम्लिखित विशेषता या प्रवर्तिया देख सकते है

1) **निजी धार्मिक सिद्धांतों का अभाव** – संत साहित्य में निजी सिद्धांतों का अभाव है ब्रह्म जीव माया संसार आदि के सम्बन्ध में इन कवियों ने जिन बातों का वर्णन किया है,वे पूर्ववर्ती आचार्यो और कवियों की देन है.

2) **आचार पक्ष की प्रधानता संत** कवियों ने अपने काव्यों में असंयम अनाचार और आइम्बर का विरोध किया है इनमे खानपान अचार –विचार शुद्धता और सदाचार को विशेष महत्व दिया गया है इनको सहज साधना और सहज आचारों को पालन करने की साधना है इन्ही आचारों के आधार पर अनेक पंथ बाने हैं आज भारत में नानक कबीर पंथ ,दाद पंथ आदि बने है इनमें मॉलिक एकता है.

3) **गुरु के प्रति** श्रद्धासंत कवियों ने अपनी रचनाओं में गुरु को सबसे ऊँचा स्थान दिया है इन्होंने ईश्वर प्राप्ति हेतु सहरु को आवश्यक बाताया है सहरु अनंत प्रकार से शिष्य का उपकार करता है वह अपनी अध्यात्मिक शक्ति के सहारे जीय को ब्रह्म का अलौकिक दर्शन कराता हगे,

4) **निम्न जाति** के कवि निर्गुण काव्यधारा के अधिकांश कवि निम्न जाति में उत्पन्न हुए समाज के निचले स्तर की गिरी जातियों में जन्म लेने के कारण इन्हें उंच नीच सम्बन्धी कटु अनुभव था इन कवियों में कबीर जुलाहा रैदास चमार सेन नाई ,दादू धुनिया सदन कसाई नाभा दास डोन के घर में जन्मे थे.

5) **सामाजिक कुरीतियों के विरोधी** – इन कवियों ने एक स्वर से जाति पाति उंच नीच आदि कुरूतियों का व्यापक पैमाने पर विरोध किया है समाज के निचले स्तर से आने के कारण इन कवियों के

लिए ज्ञान प्रासि के दरवाजे बंद थे ज्ञान की प्यास बुझाने हेतु इन कवियाँ ने अनेक दरवाजे खटखटाया किन्तु कोई भी पौडेत या महात्मा इन्हें शिक्षा देने के लिए तैयार न था,

6) **शिक्षा की कमी** संत कवि अधिक पटे–लिखे नहीं थे कबीर के सम्बन्ध में तो यहाँ तक कहा जाता है.

चारिक जुग को महातम, मुखहिं जनाई बात।।

इसका परिणाम यह हुआ है कि इन कवियों के ज्ञान का भण्डार पंडितों महात्माओं संतों तथा स्थान भमण की देन है इनके काव्य में मन की गुनी कान की सुन्नी और आँख की देखि बातों की चर्चा है.

7) **काव्य रूप** निर्गुण धारा का समस्त साहित्य मुक्तक रूप में लिखा गया है इनमें प्रबंध का अभाव है अधिकाँश रचनाएँ दोहे और पद में लिखी गयी है इन कवियों में अक्कहद पन और नस्तनौला स्वभाव के अनुकूल पद और दोहे स्यछंद होते थे.

8) **भाषासंत** कवियों की भाषा खिचड़ी या सधुक्कड़ी है.ये एक स्थान से दूसरे स्थान तक भटक – भटक कर स्थान – स्थान की भाषा ग्रहण करते थे इस कारण इनका भाषा भंडार विविधता से भरा था इन सधुक्कड़ी भाषा अनगढ़ और अपरिमार्जित है कहीं–कहीं गूट ज्ञान के कारण भाषा क्लिष्ट हो गयी है किन्तु यह सत्य है कि इन कवियों का भाषा पर जबरदस्त अधिकार है.

उद्देश्य

1. निर्गुण भक्ति काव्यधारा पर अध्ययन करना
2. भक्तिकालीन काव्य की संस्कृतिक पर अध्ययन करना

क्रियाविधि

यह शोध हमने भक्तिकालीन हिंदी निर्गुण काव्य का संस्कृतिक अनुशीलन के अध्ययन पर किया है जिसमे निर्गुण भक्ति काव्य के कवियों का अध्ययन बह किया गया है जिन्हे दो भागो में बाटा गया है जिनके नाम निम्न लिखित है तथा द्वितीयक शोध पाठय पुस्तक से संग्रहित किया गया है

डाटा विशलेषण

निर्गुण भक्ति धारा के कवि / प्रमुख कवि – ज्ञानाश्रयी शाखा की संत काव्यधारा में रामानंद का नाम सर्वोपरि है संत मत के प्रचार का श्रेय इन्ही को है . इनके विशष्य कबीर ने ज्ञानाश्रयी शाखा को अमर बना दिया निम्नवर्ग में उत्पन्न साधक पैदास भी इसी मार्ग के पिाण्य थै नानक पंथ के प्रवर्तक गुरुनानक देव भी इसी मार्ग के अनुयायी बने इसके अतिरिक्त दाद दयाल हरिदास लालदास मलूकदास,धर्मदास सुन्दरदास आदि के नाम उल्लेखनीय है.

निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्यधारा के प्रमुख संत कवियों का परिचय :

1) **कबीर :** निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्यधारा के प्रमुख प्रवर्तक संत कवि के रुप ने कबीर सर्वश्रेष्ठ है। कबीर के ग्रंथ रू वैसे कबीर के नामपर चलने वाली पुस्तकों की संख्या कई दर्जनों तक पहुंचती है, परंतु इनमें

अधिकांश कबीर द्वारा लिखित नहीं है क्योंकि कबीर स्वयं कहते हैं *'मासि कागद छयो नहीं, कलम गहिं नहीं हाथ'।*

उन्होंने जो कुछ पद लिखे थे, वे दूसरों के संग्रह किए हैं। इसलिए यह बताना कठिन है कि कौनसी रचना उनकी अपनी है, और कौन–सी परवर्तीकाल में उनके नामपर लिखी दूसरों द्वारा रचित। निरूसंदिग्ध रुप में वह कहा नहीं जा सकता कि उनकी रचनाओं का संग्रह उनके समय की रचना है।

कबीर को कोई शिक्षा–दीक्षा नहीं मिली। अनुभव तथा श्रुति से जो कुछ भी प्राप्त हुआ उसी को काव्य में निरुपित किया गया है। खोज रिपोर्टों, संदर्भ–ग्रंथो, पुस्तकालय के विवरणों आदि के आधार पर डॉ. नगेंद्र जी के अनुसार 63 ग्रंथों का उल्लेख मिलता है। जिनमें प्रमुख है अगाध मंगल, अनुरागसागर, अमरमूल, अक्षय खंड की रमैनी, अक्षर भेद की रमैनी, उग्रगीता, कबीर की बानी, कबीर की गौरख गोष्टी, कबीर की साखी, बीजक, ब्रह्मनिरुपण, मुहम्मद बोध, रेखता, विचारमाला, विवेकसागर शब्दावली, हंसमुक्तावली, ज्ञानसागर आदि। इन ग्रंथों में ज्ञानोपदेश की प्रधानता है। ज्ञानोपदेश के साथ–साथ योगाभ्यास, भक्त की दिनचर्या सत्यवचन, विनयशीलता, नामस्मरण–महिमा, संतों का वर्णन, सत्पुरुष का निरुपण, गुरु–महिमा, माया, सत्संग आदि विषय वर्णित हैं। इन्ही विषयों के आधारपर कबीर समाज सुधारक, समन्वयक, भक्त, दार्शनिक कवि इत्यादी विविध रूपों में हमारे सामने आते हैं।

कबीर निर्गुण भक्ति संप्रदाय के प्रतिनिधि संत कवि हैं। इन्होंने निर्गुण, निराकार राम (ब्रह्म) की उपासना की है। कबीर का एकेश्वरवाद भारतीय अद्वैतवाद के अनुरुप ही है। कबीर की कविता में आत्मापरमात्मा का मिलन है। परमात्मा से मिलन के लिए कबीर गुरु और ज्ञान दोनों को आवश्यक मानते हैं। उनकी योगसाधना शुष्क नहीं है, उसमें प्रेम का निरुपण भी है। कबीर ने अपनी वाणी द्वारा वेदांत तत्व, नश्वरता, माया, मुर्तिपूजा, हिंदु–मुस्लिम दोनों धर्मों में होनेवाला बाह्यांडबर, अनिष्ठ प्रथाएँ, रीतिरिवाज आदि पर व्यंग्य बाण चलाये हैं। इनकी भाषा सधुक्कडी या खिचडी भाषा अर्थात खडीबोली, अवधी, पूर्वी (बिहारी) ब्रजभाषा आदि बोलियों का संमिश्रण है।

2) रैदास : भक्तिकालीन संतों में रैदास अथवा रविदास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये कबीर के समकालीन थे तथा रामानंद के शिष्य माने जाते हैं। इनके प्रमुख ग्रंथ हैं – भक्तमाल, रैदास की परिचई, भक्तमाल की टीका आदि प्रमुख ग्रंथों के आधार पर ज्ञात होता है कि रैदास का जन्म चमार कुल में हुआ था। रैदास ने स्वयं को चमार ही बताया है – "कह रैदास खलास चमारा। ऐसी मेरी जाति विख्यात चमार।ष इन्होने वैवाहिक जीवन भी व्यतित किया था। अपने जीवन काल में मथुरा, वृंदावन, प्रयाग, भरतपुर, पुष्कर, चितौड आदि स्थानों का भ्रमण किया था। इनका लिखा कोई स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध नहीं होता। इनके लिखे 40 पद श्गुरु ग्रंथसाहबश में संकलित है, तथा कुछ फुटकर पदों की रचना भी की।

ये निर्गुण मार्गी संत थे। इन्होंने अपनी अनुभूति और जिज्ञासा का विषय निर्गुण ब्रह्म को माना। इनका साधना–मार्ग कबीर जैसा ही है। कबीर के समान इन्होंने भी तीर्थयात्राओं, मूर्तिपूजा आदि बाह्यविधि विधानों के स्थान पर आंतरिक साधना पर विशेष बल दिया है। इनकी भाषा में अवधी, राजस्थानी, उर्दू, फारसी के शब्द प्रयुक्त हैं। ऐसा माना जाता है कि मौरा ने गुरु के रुपमें इनका स्वीकार किया था। इनके काव्य में संतकाव्य की समस्त प्रवृत्तियों का विकास हुआ है। इनके अनुयायी अपने आप को श्रविदासीश कहते

3. **धर्मदास :** कबीर परंपरा के संत कवियों में धर्मदास का नाम इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि क्योंकि कबीर की मृत्यू के बाद उनकी गद्दीपर बैठनेवाले संत धर्मदास ही थे। ये जाति के बनिये थे। ये बांधवगढ़ के रहनेवाले थे। बचपन से ही ईश्वर के प्रति आस्था तथा भक्ति होने के कारण ये पूजा, सत्संग, तीर्थाटन किया करते थे। पहले इनकी भक्ति सगुण थी, लेकिन कबीर के संपर्क में आने से इनका झुकाव निर्गुण पंथ की ओर हो गया। इन्होंने अपना सारा धन लुटा दिया और निर्गुण पंथ में दीक्षा लेकर आध्यात्मिक विरह के छंद लिखने लगे। इन्होंने पूर्वी भाषा का ही प्रयोग किया है। इनकी अन्योक्तियाँ अत्याधिक मार्मिक हैं। इन्होंने प्रेम तत्व को लेकर अपनी वाणी का प्रचार लिया है। इनके अनुयायियों की शाखा श्धर्मदासी शाखाश के नाम से प्रसिद्ध है। धर्मदास की रचनाओं का संग्रह श्धरमदास की बानीश नाम से प्रकाशित हो चुका है। ष्सुख–निधानष इनके प्राचीन ग्रंथों में से है।

4) गुरुनानक : गुरुनानक को नानकदेव के नाम से भी जाना जाता है। ये महात्मा सिक्ख–संप्रदाय के प्रवर्तक थे। इनका जन्म लाहोर जिले के तलवंडी ग्राम में हुआ था। इन्होंने बचपन में संस्कृत, फारसी, हिंदी और पंजाबी भाषा का अध्ययन किया। इनके पिता का नाम कस्तूरचंद, माता का नाम तृप्ता, पत्नी सुलक्षणा तथा श्रीचंद और लक्ष्मीचंद नाम के दो पुत्र थे। इनमें से बड़े पुत्र श्रीचंद ने आगे चलकर श्उदासी संप्रदायश का प्रवर्तन किया। ये बालकाल से ही संत प्रवृत्ति के थे। त्यागी तथा साधुसेवी थे। आधिकांश समय संतो के साथ व्यतीत करते थे। इन्होंने भगवत् भक्ति के भजन गाये हैं। इसके लिए कबीर के निर्गुण पंथ का सहारा लेकर निर्गुण उपासना का प्रचार पंजाब में प्रारंभ कर ये सिख्ख संप्रदाय के आदि गुरु सिद्ध

गुरुनानक ने निर्गुण ब्रह्म की उपासना, संसार की क्षणभंगुरता, माया, नाम–जप की महिमा, गुरुमहिमा, सात्विक कर्मों की महत्ता आदि विषयों को अपने काव्य में प्रतिपादित किया है। इनके पद, दोहे, साँखियों का संग्रह इनकी वाणी श्गुरु ग्रंथ साहबश में संग्रहीत हैं। इनके कुछ भजन पंजाबी में, कुछ देश की प्रचलित काव्यभाषा हिंदी में, कही खडीबोली के रूप तो और कहीं ब्रजभाषा के रूप में है। कबीर जैसे खंडन मंडन की प्रवृत्ति इनमें दिखाई नहीं देती। इनके काव्य में भक्ति, दीनता, सरलता, समर्पण की प्रधानता के साथ शांत रस की अविरल धारा प्रवाहित है।

5) दादूदयाल : भक्तिकालीन संतो में दादू पंच का प्रवर्तन करनेवाले धर्म सुधारक, समाज सुधारक तथा रहस्यवादी कवि के रूप में संत दादू दयाल विख्यात हुए। कुछ लोग इन्हें गुजराती ब्राह्मण तो कुछ लोक मोची वा धुनिया मानते हैं। दादू के जन्म, जाति के बारे में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं। इन्होंने अपने जीवन काल में ही दादू–पंथ की स्थापना की। कहा जाता है कि इन्होंने 20 हजार पदों और साखियों की रचना की। इनके शिष्यों संतदास तथा जगन्नाथदास ने श्हंसवाणीश नाम से काव्य संकलन किया। दादू की बानी कबीरवाणी के अनुरूप ही है, किंतु दादू के काव्य में कबीर जैसी खंडन–मंडन की प्रवृत्ति दिखायी नहीं देती। दादू की बानी में सर्वत्र सहजता और सरलता है। भाषा सरल, बोधगम्य, ब्रजभाषा है, जिसमें राजस्थानी और खडीबोली के शब्दों की प्रचुरता है। इन्होंने कुछ पद गुजराती, राजस्थानी और पंजाबी में भी कहे हैं। इनकी बानियों में ईश्वर की व्यापकता गुरु महिमा, जाँति–पाँति का निराकरण, हिंदु मुस्लिम अभेद, संसार की नश्वरता, आत्मबोध आदि प्रसंग आये हैं।

6) सुंदरदास : सुंदरदास का जन्म जयपूर की पुरानी राजधानी धौंसा (धीसा) नामक नगरी में खंडेवाल परिवार में हुआ। ये दादू दयाल के शिष्य थे तथा छः वर्ष की अवस्था में दादू के संग में रहने लगे। ये आजीवन अविवाहित रहे। इन्होंने विद्याभ्यास के साथ महात्माओं की सत्संगति भी की। इनका हिंदी, पंजाबी, गुजराती, संस्कृत तथा फारसी भाषाओं पर समान अधिकार था। अपने नामके अनुसार इनका शरीर मडौल और सुंदर तथा स्वभाव कोमल, मृदुल था। इनके लिखे 42 ग्रंथ माने जाते हैं। इनमें से श्ज्ञानसमुद्र तथा श्सुंदर विलासश विशेष प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। इनकी कविता में रस, अलंकार का निरुपण हुआ है। यमक, अनुप्रास, शब्दालंकार और उत्तमोत्तम अर्थालंकार भी मिलते हैं।

7) मलूकदास : इनका जन्म लाला सुंदरदास खत्री के घर जिला इलाहाबाद में श्कडाश नामक ग्राम में अकबर के समय और औरंगजेब के समय इनकी मृत्यु हुई। मलूकदास ने ज्ञान, योग, निर्गुण भक्ति, वैराग्य दार्शनिक चरित्र विषयक, उपदेशात्मक आदिसे संबंधित ग्रंथ लिखे हैं। जिनमें प्रमुख हैं – ज्ञानयोध, रतनखान, शक्ति–विवेक, मुखसागर, भक्त–वच्छाली, बारहखडी, सबद आदि। इनमें से ज्ञानबोध तथा रामावतार तीला इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। इन्होंने ब्रज तथा अवधी दोनों भाषाओं में काव्य रचना की है। इनकी भाषा में चाल की खाडीबोली है और उसमें उर्द–फारसी का पट मिलता है। कहीं–कहीं पद विन्यास और कवित आदि छंद भी पाये जाते हैं। आत्मबोध, वैराग्य और प्रेम आदि पर इनकी बानी बडी मनोहर है।

8) अक्षर अनन्य : ये दतिया रियासत के रहनेवाले थे और कुछ दिनों दतिया के राजा पृथ्वीसिंह के दीवान रहे थे। महाराज छत्रसाल ने इनसे दीक्षा ली थी। ये विज्ञान तथा वेदांत के अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने योग और वेदांत पर कई ग्रंथ लिखे। जिनमें प्रमुख है राजयोग, विज्ञान योग, ध्यान योग, सिद्धांतबोध, विवेकदीपिका, ब्रह्मज्ञान, अनन्य प्रकाश आदि। इन्होंने दुर्गा सप्तशती का भी हिंदी पद्यों में अनुवाद किया है।

निर्गुणभक्ति काव्य की दूसरी शाखा सूफी काव्य या सूफी प्रेमाख्यानक काव्य की संज्ञा से अभिहित की जाती है। इनका मानना है, कि भगवान की अनुभूति प्रेम द्वारा हो सकती है। आ. रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी सूफी काव्य का प्रवर्तन कुतुबन की मृगावतीश से माना था। आ. हजारीप्रसाद विवेदि ने ईश्वरदास रचित श्सत्यवती कथाश को तो डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त ने असाइत रचित श्हसावलीश को इस परंपरा की प्रथा कृति माना है। प्रेममार्गी कवि प्रायरू मुसलमान थे। इन्होंने धार्मिक एकता के प्रयत्न किये। प्रेमधारा का प्रधाकवि जायसी को माना जाता है।

1. **कुतुबन :** ये चिरती वंश के शेख बुरहान के शिष्य थे। ये जौनपुर के सुलतान हुसेन शाह के आश्रित कवि थे। उन्हीं के आश्रय में रहते हुए कुतुबन ने 'मृगावती' नामक प्रेमाख्यान काव्यग्रंथ की रचना का था। मृगावता में गणपति देव के पुत्र तथा रुप मुरारी की राजकुमारी श्मृगावती की प्रेमकथा का वर्णन है यह एक दुःखांत प्रेम कथा है। जिसके अंत में नायक राजकुमार की हाथी से गिरकर मृत्यू हो जाती है तथा दोनों रानियाँ मृगावती और सुंदरी सती हो जाती है। सूफी विचारधारा के अनुसार नायिका का प्रेमी के लिए प्राण त्यागना साधना पथ की सिद्धि मानी जाती है। यह ग्रंथ अवधी भाषा तथा दोहा–चौपाई शैली में लिखा गया है। इस कहानी के द्वारा कवि ने प्रेम मार्ग के त्याग और कष्ट का निरुपण करके साधक के भगवत–प्रेम का स्वरूप दिखाया है।

2. **मंझन :** इनके सम्बन्ध में कोई प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध नहीं होती। केवल एक रचना **'मधुमालती'** ग्रंथ प्राप्त होता है। इस ग्रंथ में कनेसरनगर के राजा सूरजभान के पुत्र राजकुमार मनोहर का महारस की राजकुमारी मधुमती के साथ प्रेम हो जाता है। और कुछ अवधि के लिए वे दोनों एकदूसरे से बिछड जाते हैं और फिर दोनों का मिलन हो जाता है। कवि ने नायक और नायिका के अलावा उपनायक और उपनायिका की भी कल्पना करके कथा को विस्तृत रूप दिया है। जन्मजन्मांतर के बीच प्रेम की अखंडता दिखाकर मंझन ने प्रेम के व्यापक स्वरूप को स्पष्ट किया है। इस ग्रंथ में विरह कथा के साथसाथ आध्यात्मिक तथ्यों का भी निरुपण किया गया है। अवधी भाषा एवं दोहो–चौपाई छंदो में लिखी कृति की शैली सरल एवं सरस है।

3. **मलिक मुहम्मद जायसी :** ये प्रेममार्गी कवियों के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। ये प्रसिद्ध सूफी फकीर शेख महिउद्दीन के शिष्य थे। जायस में रहने के कारण जायसी कहलाये। ये हिंदी प्रेमाख्यानक काव्य परंपरा के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनके पद्मावत, अखरावट, आखिरी कलाम, चित्ररेखा, कहरानामा, मसलानामा आदि ग्रंथ माने जाते हैं। इसमें श्पद्मावतश सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ है। सूफी दर्शन के निरुपण तथा साहित्यिकता की दृष्टि से यह एक सफल ग्रंथ है। जायसी अपने समय के सिद्ध फकीरों में गिने जाते थे और अमेठी के राजघराने में इनका विशेष सम्मान किया जाता था। ये देखने में कुरुप थे। जायसी का श्पद्मावतश उनकी अक्षय कीर्ति का आधार है। प्रेम पीर के सफल गायक के रूप में जायसी सम्मानित किए जाते हैं। जायसी कृत श्पद्मावतश अत्यंत लोकप्रिय काव्य है। इसमें इतिहास और कल्पना का योग है।

4. **नूर मोहम्मद :** ये दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह के समकालीन थे। ये जौनपुर जिले के श्सबरहदश नामक स्थान के रहनेवाले थे। फारसी के अच्छे ज्ञाता, हिंदी काव्यभाषा का ज्ञान होने के कारण इन्होंने श्इंद्रावतीश नामक एक सुंदर प्रेमाख्यान काव्य लिखा। जिसमें कलिंजर के राजकुमार राजकुंवर और आगमपुर की राजकुमारी इंद्रावती की प्रेम कहानी हैं।

5. **मुल्ला दाऊद :** अल्लाउद्दीन के समकालीन कवि मुल्ला दाऊद ने श्चंदायनश नामक प्रेमाख्यान काव्य की रचना की। जिसमें नायक लोर तथा नायिका चंदा के उन्मुक्त प्रणय, प्रणय में आनेवाली बाधाएँ तथा अंत में मिलनेवाली सफलता का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत ग्रंथ की रचना अवधी भाषा में हुई है।

6. **दामोदर कवि** दामोदर कवि ने श्लखमसेन पद्मावती कथाश नामक ग्रंथ की रचना की। जिसमें राजा लक्ष्मण सेन तथा राजकुमारी पदमावती की प्रेमकथा का वर्णन है। प्रस्तुत ग्रंथ में दोहा, चौपाई, सोरठा छंडो का प्रयोग किया गया है। साथ ही यथास्थान संस्कृत की उक्तियों का भी निरुपण किया गया है। ––––

7. **नरपति–व्यास :** सूफी मत के अनुयायी नरपति व्यास ने शाहजहां के समय श्नल दमयंती कथाश नामक की एक कहानी लिखी। जिसमें सौंदर्य और विरह का वर्णन अत्यंत सजीव एवं मार्मिक है। इस रचना की भाषा अवधी है और दोहा तथा चौपाई छंदो का प्रयोग किया गया है।

इन कवियों के अतिरिक्त फाजिलशाह, शेख निसार, कासिमशाह, कुशललाभ, नंददास, जानकवि, नारायणदास, पुस्कर गणपति, ईश्वरदास, कल्लोल कवि आदि अन्य उल्लेखनीय कवि है। इस प्रकार सौंदर्य, प्रेम और विरह की व्यंजना की दृष्टि से सूफी परंपरा का अनन्य साधारण महत्व है। इसका तौकिक प्रेम –– भी उच्च आदर्श से युक्त है। प्रस्तुत परंपरा अत्यंत लोकप्रिय रही है।

उपसंहार

अत: कहा जा सकता है भक्तिकालीन हिंदी युग में निम्न परिस्थितियों के चलते सर्गुण और निर्गुण भक्ति का विकास हुआ हमने निर्गुण भक्ति का सम्पूर्ण अध्ययन हमने किया है कवियों से लेकर उस समय की परिस्तियो का वर्णन भी किया गया निर्गुण की दो उपशाखाएं हैं– ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी तथा सगुण की रामभक्ति शाखा तथा कृष्णभक्ति शाखा । निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्यधारा के प्रमुख प्रवर्तक है कबीर और प्रेमाश्रयी काव्यधारा के प्रवर्तक है जायसी। रामभक्ति शाखा के प्रवर्तक है, तुलसीदास और कृष्णभक्ति शाखा के प्रवर्तक है सूरदास। निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के संतकवि जॉतिपाति का भेदभाव मिटाकर एकता का प्रचार तथा प्रसार करना चाहते थे। प्रेमाश्रयी काव्यधारा के सूफी कवियों ने सांस्कृतिक एकता का प्रयत्न किया है। इन्होंने हिंदुओं की प्रेमगाथाओं को लेकर अपने अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति की है। निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख संत कवि है – कबीर, रैदास, धर्मदास, नानक, दादूदयाल, सुंदरदास, मलुकदास, तो प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख सूफी कवि हैं, कुतुबन, मंशन, जायसी, उसमान, शेख नबी, कासिम शाह, सूर मोहम्मद, मुल्ता दाऊद आदि।

संदर्भ सूचि :

[1] डॉ. वैरागी लक्ष्मीलाल, (2019)हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास, संधी प्रकाशन, जयपुर, द्वितीय संस्कारण,2019 पृष्ठ सं 12.

[2] टण्डन कमल नारायण, टण्डन पल्लवी (2018); हिंदी साहित्य का इतिहास, क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण. पृष्ठ सं 50.

[3] शर्मा यज्ञदत्त, (2018)प्राचीन हिंदी साहित्य, साहित्य प्रकाशन, मालीवाडा, दिल्ली, प्रथम संस्करण,2018 पृष्ठ सं 30.

[4] डॉ. चातक, प्रो. वर्मा राजकुमार; (2020) हिंदी साहित्य का इतिहास, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर. पृष्ठ सं 15.

[5] डॉ. सिंह बच्चन, (2020)हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पहलासंस्करण, पृष्ठ सं 30.

[6] आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, (2018) हिंदी साहित्य का अतीत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ सं 22.

[7] रामस्वरूप चतुर्वेदी, (2018) हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली • पृष्ठ सं 12.

[8] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी(2019) हिंदी साहित्य उद्भव और विकास, , राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ सं 25.

[9] डॉ नगेन्द्र,(2020)हिंदी साहित्य का इतिहास, संपा.के एल मल्लिक एण्ड संस, दिल्ली पृष्ठ सं 20.

[10] नलिन विलोचन शर्मा,(2015) साहित्य का इतिहास दर्शन,बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना पृष्ठ सं 40.

[11] गोपेश्वर सिंह (2020)भक्ति आन्दोलन के सामाजिक आधार, संपा. पृष्ठ सं 12.

[12] मैनेजर पाण्डेय, (2017)साहित्य और इतिहास दृष्टि, वाणी प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ सं 50.

[13] मुकेश गर्ग (2018)मध्यकालीन साहित्य और सौंदर्यबोध, , जगत राम एण्ड संस, दिल्ली पृष्ठ सं 20.

[14] डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, (2020) हिंदी साहित्य का सरल इतिहास, ओरिएंट ब्लैकस्वान, दिल्ली पृष्ठ सं 40.

[15] अशोक कुमार,(2017)—भक्ति के तीन स्वर जॉन स्ट्रेटन हॉली, (अनु०) राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ सं 60.